International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 18-11-2019; Accepted: 19-12-2019
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 1; 2020; Page No. 56-59

दक्षिण भारत की सन्त आण्डाल और उनका ग्रन्थ 'तिरुप्पावै'

डॉ. तृप्ति उकास
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी), शास. महाकोशल कला एवं वाणिज्य, स्वशासी महाविद्यालय, जबलपुर, मध्य प्रदेश, भारत

सारांश
12 आलवार सन्तों में एकमात्र महिला सन्त आण्डाल का काव्य ईश्वर की उपासना का अप्रतिम उदाहरण है, जिसके लिये उन्हें दक्षिण की मीरा भी कहा जाता है। वे भगवान कृष्ण की अनन्य भक्त थीं। उनके समस्त पद ईश्वर के प्रति उनके समर्पण और प्रेमभाव का उद्घोष हैं। दक्षिण भारत के प्रत्येक घर में रंगनायक विष्णु के साथ रंगनायकी आण्डाल की पूजा होती है। भारतीय इतिहास के मध्यकाल का पहला चरण पेरिअलवार और मधुर रस की उपासिका आण्डाल रंगनायिकी की उपस्थिति से धन्य हो गया। आण्डाल ने अपनी अल्पायु में दो ग्रन्थों कि रचना की। साहित्य, दर्शन, धर्म, अध्यात्म की दृष्टि से ये दोनों ग्रंथ तमिल साहित्य में अपना एक अलग स्थान रखते हैं। आण्डाल को सबसे अधिक उनकी काव्य रचनाओं के लिए याद किया जाता है। इन में जहाँ इन का कृष्ण के प्रति अनुराग स्पष्ट होता है, वहीं इन में आण्डाल के व्यक्तिगत जीवन की झलक भी मिलती है। इन में वह स्वयं को एक अबोध बालिका के रूप में भगवान को समर्पित करती है। अपने पदों में वह अपने मित्रों सगे–संबंधियों, अपने पास के पशु–पक्षियों से प्रार्थना करती है, कि वे भागवत भजन में उनकी सहायता करें। वे अपने पिता पण्डित विष्णुचित्त के प्रति भी कृतज्ञता प्रकट करती है, कि पिता ने उन्हें भगवद् भक्ति का पाठ पढ़ाया।
'तिरूपवई' या 'तिरूप्पावै' मात्रा तीस पदों का काव्य प्रबंध है। इस में आण्डाल ने स्वयं को भगवान कृष्ण की गोपी मान कर चित्रित किया है। उनकी इच्छा है, कि वह इस जन्म में ही नहीं वरन् अगले जन्मों में भी इसी प्रकार भगवान कि ग्वालन बनी रहें। आण्डाल अपने प्रभु को 'नारायण', 'हरि', 'माधव', 'सर्वेश्वर', 'वासुदेव', 'शंख–चक्रधारी' इत्यादि सम्बोधनों से सम्बोधित करती हैं। आण्डाल की भक्ति श्री रंगनाथ के प्रति स्वकीया–भाव की भक्ति है।'तिरुपवई' को जन साधारण में रामायण की भाँति अत्यधिक प्रेम भाव और रुचि से सुना जाता है। तमिलनाडु के हर घर में यह ग्रन्थ अत्यन्त लोकप्रिय है।

मूल शब्द: विषय प्रवेश, तिरुप्पावै का महत्त्व, विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त, तिरुप्पावै में विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त, संदर्भ सूची।

प्रस्तावना
पाँचवीं से नौवीं शताब्दियों के बीच दक्षिण भारत के तमिल भाषी क्षेत्र में आलवार संतों ने भक्ति भाव की ऐसी दीपशिखा प्रज्ज्वलित की, कि उससे न केवल भारत वरन् पूरा महाद्वीप आलोकित हो उठा। तमिल में आलवार शब्द का अर्थ है, ऐसा व्यक्ति जो ईश्वर भक्ति में सराबोर हो गया हो। जो भगवद् प्रेम में पूरी तरह से डूब चुका हो। ये संत प्रायः यायावर होते थे। एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र तक, एक मंदिर से दूसरे मंदिर तक, एक तीर्थ स्थान से दूसरे तीर्थ स्थान तक इनकी यात्रा अनवरत् चलती रहती थी। इस यात्रा में इन का भजन, कीर्तन, अर्चना, उपासना आदि का काम साथ–साथ चलता रहता था।
दक्षिण भारतीय आलवार एवं नयनार सन्तों की ईश्वर भक्ति एवं इस हेतु किये गये प्रचार–प्रसार का भक्ति आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। आलवार सन्त भक्ति आन्दोलन के जन्मदाता माने जाते हैं। 12 आलवार सन्तों में एकमात्र महिला सन्त आण्डाल का काव्य ईश्वर की उपासना का अप्रतिम उदाहरण है, जिसके लिये उन्हें दक्षिण की मीरा भी कहा जाता है। वे भगवान कृष्ण की अनन्य भक्त थीं। उनके समस्त पद ईश्वर के प्रति उनके समर्पण और प्रेमभाव का उद्घोष हैं। दक्षिण भारत के प्रत्येक घर में रंगनायक विष्णु के साथ रंगनायकी आण्डाल की पूजा होती है। भारतीय इतिहास के मध्यकाल का पहला चरण पेरिअलवार और मधुर रस की उपासिका आण्डाल रंगनायिकी की उपस्थिति से धन्य हो गया।[2]

> ''Andal is the very first lady poet in South India. She was one of the 12 Alwars and the only female of these illusrtious Vishnu Bhaktas. Alwars were the saints who revitalized the Hindu religion with their emphasis on true devotion to God and their worship through poetry, between the 5th and 9th centuries.[1]

दक्षिण के संतों की भाषा, काव्य, दर्शन अथवा भावावेश में न कहीं जाति का बंधन था, न किसी पद या प्रतिष्ठा का प्रश्न। इन की भक्ति को भावपूर्ण भक्ति का नाम दिया गया। पाँचवें आलवार संत थे – शठकोप। इन्होंने अपनी रचना 'सहस्र गीति' में दाशरथी राम के बारे में लिखा :–

'दशरथस्यसुतम् ते विनानान्यशरणवानस्मी।[3]

इस आलवार परम्परा में एक असाधारण प्रतिभा थीं, साध्वी आण्डाल। बारह संतों में आण्डाल एक मात्र साध्वी थीं। वे आठवें आलवार विष्णुचित्त की पुत्री थीं और इनका बचपन का नाम था गोदा या कौदे। यह बाद में आण्डाल अथवा रंगनायिकी के नाम से प्रसिद्ध हुईं। तुलसी वाटिका में प्रकट होने के कारण इन्हें भूमिजा सीता का अवतार माना जाता है।
तमिल की वैष्णव भक्ति परम्परा की एकमात्र कवयित्री आण्डाल का जन्म समय 715 ई. के निकट माना जा सकता है। अपने समय की यह प्रसिद्ध आलवार संत थीं। इनकी भक्ति की तुलना राजस्थान की प्रख्यात कृष्णभक्त कवयित्री मीरा से की जाती है। इनके जीवन और बाल्यकाल के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है, कि एक बार जब एक दिन पण्डित विष्णुचित्त अपने प्रातः कालीन दैनिक कार्य पर निकले तो देखा कि उनकी वाटिका में तुलसी पौधे कि छाया में एक नन्ही–सी बच्ची लेटी है। पण्डित विष्णुचित्त नितांत अकेले थे। उन्हें लगा कि धरती माता ने यह नन्ही बच्ची एक पुत्री के रूप में दी है। अतः उन्होंने इस का नाम 'गोदई' अर्थात 'धरती माता की तरफ से भेंट' रख दिया। वे उसे अपने घर ले आये और उस का पालन–पोषण किया। गोदई ईश्वर प्रेम और

भक्ति के वातावरण में बड़ी हुई। पण्डित विष्णुचित्त भी उस का पूरा ध्यान रखते। उसे भजन–गायन सिखाते, भगवान कृष्ण की कथाएँ सुनाते, दर्शन और शास्त्रों की बातें करते और तमिल काव्य की जानकारी देते। भगवान के प्रति असीम भक्ति भाव का प्रत्यक्ष प्रभाव नन्हीं गोदई पर बढ़ता ही गया। उन्हें अपने जीवन में भगवान के सिवाय कुछ और दिखाई नहीं देता था। उत्तर भारत की मीरा की तरह उन्हें लगता, कि उनका जीवन केवल भगवान के लिए ही है। मीरा की तरह वह भी कृष्ण प्रेम में दीवानी हो गयीं और उन्होंने कृष्ण को ही अपना पति मान लिया। वह स्वयं को कृष्ण की भक्तिन, भार्या, दासी, प्रेमिका रूप में ही प्रदर्शित करती हैं।

उन के पिता नित्य प्रति पूजा के लिए पुष्प माला तैयार करते और स्नान करने जाते, इस के बाद गोदई आती, माला अपने गले में डाल कर देखती कि ठीक बनी की नहीं। जितनी देर माला उस के गले में रहती उतने देर वह स्वयं को विष्णु की सहचरी मानती। पिता के आने से पहले ही वह माला को उतार कर पूजा की थाली में रख देती। लेकिन एक दिन पिता ने उसे ऐसा करते हुए देख लिया। वे स्तब्ध रह गए कि उन की बेटी ने पूजा की थाली अपवित्र कर दी है। उन्होंने गोदई को डाँट लगायी, भगवान से क्षमा याचना की और एक दूसरी माला बना कर भगवान को अर्पित की। उसी रात भगवान कृष्ण ने विष्णुचित्त को स्वप्न में दर्शन दिये। कहते हैं कि भगवान ने विष्णुचित्त से यही पूछा कि 'उन्होंने पहले बनायी हुई माला को क्यों फेंक दिया था।' भगवान ने यही कहा कि उन्हें वही माला प्रिय थी। उन्हें गोदई के स्पर्श की माला अच्छी लगती है और प्रति दिन वे वही माला अर्पित करें। पण्डित विष्णुचित्त की आँख खुली तो उन के नेत्रों से आँसू बह निकले। यह आनंद और हर्ष के आँसू थे। उन्हें लगा कि उन की बेटी, साधारण नहीं है। तब ही से आण्डाल 'शूडिकोडुत नाच्चियार'(उच्छिष्ट माला प्रभु को समर्पित करने वाली) कहलायीं।

दक्षिण भारत में श्री रंगधाम शताब्दियों से वैष्णव भक्ति का केंद्र रहा है। राम भक्ति के प्रवर्तक आलवारों को राम भक्ति का प्रसाद इसी स्थान पर प्राप्त हुआ था। यहीं पर श्री रंगनाथ का भव्य मंदिर है। गोदई जब बड़ी हुई तो पिता को उस के विवाह की चिंता सताने लगी। लेकिन गोदई ने भगवान को अपना सब कुछ सौंप दिया था। उस ने पिता से कहा कि वह विवाह करेगी तो भगवान श्री रंगनाथ से। पिता चिन्तित हो गए। उन्होने कहा 'यह कैसे संभव है?' उसी दिन रात में उन्हें फिर भगवान के दर्शन हुए। भगवान ने निर्देश दिया कि 'गोदई को विवाह के साज–शृंगार के साथ मंदिर में भेज दो।' दूसरी ओर भगवान ने मंदिर के पुजारी को स्वप्न में निर्देश दिया कि 'मंदिर में विवाह के साज–शृंगार में आई गोदई का स्वागत करें'। इसी समय भगवान ने उसे आण्डाल का नाम दिया अर्थात् जिसने भगवान को प्राप्त किया। पण्डित विष्णुचित्त प्रसन्न थे, लेकिन किसी अनहोनी की संभावना से चिन्तित भी थे। उन्हें बेटी से बिछड़ने का दुःख भी था। भगवान के निर्देश के अनुसार उन्होंने विवाह की तैयारी की, अपनी बेटी का विवाह योग्य साज–शृंगार कराया और पालकी में बैठा कर बेटी को श्री रंगधाम मंदिर भेजा। पालकी जैसे ही मंदिर के द्वार पर पहुँची, आण्डाल की प्रसन्नता की सीमा नहीं थी। मंदिर के द्वार पर वह सब औपचारिकता भूल कर मंदिर के गर्भ गृह की ओर भागी। सीधे जा कर भगवान श्रीरंगनाथ की मूर्ति से लिपट गई। लेकिन यह क्या, सभी आश्चर्य चकित रह गये, अचानक मूर्ति से एक दिव्य ज्योति उठी और उस ने आण्डाल को अपने में समाहित कर लिया। भगवान की मूर्ति के चेहरे पर भी एक स्मित थी। पूरे वातावरण में शान्ति छा गयी। आण्डाल परम धाम जा चुकी थीं। उस समय उन की आयु मात्र 15 वर्ष थी।

श्रीविलिपुत्तुर नगर का नाम ही हृदय में एक स्पंदन पैदा करता है। यह तमिलनाडु के भगवान विष्णु के 108 दिव्य स्थानों में यह एक प्रमुख स्थान माना जाता है। किंवदन्ती यह है, कि कोई भी व्यक्ति इस नगर का नाम लेने से पहले अपने हृदय में इस के प्रति अपना आदर भाव प्रकट करता है। यह मदुरै से लगभग 74 किलोमीटर दूर स्थित कभी एक छोटा–सा गाँव था, जिसकी तुलसी वाटिका में पण्डित विष्णुचित्त को नन्ही आण्डाल मिली थी। आज यह तमिलनाडु का एक बड़ा तीर्थ स्थान बन चुका है। पण्डित विष्णुचित्त का घर जो भगवान विष्णु के मंदिर के पास ही था, अब एक मंदिर में परिवर्तित हो गया है। अब इस में साध्वी आण्डाल की एक भव्य मूर्ति स्थापित की गयी है। यहीं पर एक कुआँ है जिसमें झाँक कर आण्डाल, भगवान की पूजा के लिए बनायी गयी माला को पहन कर स्वयं को निहारा करती थीं। इन दोनों का तमिल साहित्य को अमूल्य योगदान है। भगवान विष्णु के प्रति उच्चरित आण्डाल के 'तिरुपवई' तथा 'पेरियालवार' (विष्णुचित्त) के 'तिरुपल्लन्दु' तमिल साहित्य की अमूल्य निधि हैं। आण्डाल को सबसे अधिक उनकी काव्य रचनाओं के लिए याद किया जाता है। इन में जहाँ इन का कृष्ण के प्रति अनुराग स्पष्ट होता है, वहीं इन में आण्डाल के व्यक्तिगत जीवन की झलक भी मिलती है। इन में वह स्वयं को एक अबोध बालिका के रूप में भगवान को समर्पित करती है। अपने पदों में वह अपने मित्रों सगे–संबंधियों, अपने पास के पशु–पक्षियों से प्रार्थना करती है, कि वे भागवत भजन में उनकी सहायता करें। वे अपने पिता पण्डित विष्णुचित्त के प्रति भी कृतज्ञता प्रकट करती है, कि पिता ने उन्हें भगवद् भक्ति का पाठ पढ़ाया।

आण्डाल ने अपनी अल्पायु में दो ग्रन्थों कि रचना की। साहित्य, दर्शन, धर्म, अध्यात्म की दृष्टि से ये दोनों ग्रंथ तमिल साहित्य में अपना एक अलग स्थान रखते हैं। 'तिरूपवई' या 'तिरूप्पावै' मात्रा तीस पदों का काव्य प्रबंध है। इस में आण्डाल ने स्वयं को भगवान कृष्ण की गोपी मान कर चित्रित किया है। उनकी इच्छा है, कि वह इस जन्म में ही नहीं वरन् अगले जन्मों में भी इसी प्रकार भगवान कि ग्वालन बनी रहें। दूसरे ग्रन्थ में 'नाच्चियार तिरूमोलि' 143 पद हैं। नचियार का अर्थ है दैवी और तिरुमोली का अर्थ है कहावतें, अर्थात पवित्र कहावतें। इस में भगवान विष्णु के प्रति आण्डाल का उत्कट प्रेम परिलक्षित होता है। इसमें तमिल कि प्राचीन काव्यात्मक परम्पराओं को संस्कृत में रचित वेदों और पुराणों कि सूक्तियों में निबद्ध कर वर्णित किया गया है। इन दोनों ग्रन्थों का प्रभाव तमिल जगत में अत्यधिक गहरा है। दोनों ही ग्रन्थ तमिल भाषा के पवित्र ग्रन्थ हैं। आण्डाल अपने प्रभु को 'नारायण', 'हरि', 'माधव', 'सर्वेश्वर', 'वासुदेव', 'शंख–चक्रधारी' इत्यादि सम्बोधनों से सम्बोधित करती हैं। आण्डाल की भक्ति श्री रंगनाथ के प्रति स्वकीया–भाव की भक्ति है। ये रंगनाथ जी के साथ अपने विधिवत् विवाह का वर्णन करती हैं।

तिरुप्पावै का महत्त्व

तिरुप्पावै के बारे में तमिल में यह कहा गया है :–

"वेधमनैत्तुक्कुम वित्तागुम कोधै तमिज़ ऐऐन्दुम ऐन्दुम अरियाध मानिडरै वैयम सुमप्पधुम वंभु"।

इसका अर्थ यह है, कि वेदों का सार तिरुप्पावै में है और जो लोग इन तीस पदों (टमतेमे) को नहीं जानते हैं, उनको साथ ले जाना। यह पृथ्वी का बोझ हैं।

"ऐऐन्दुम ऐन्दुम" –{(5 x 5)+5} = तीस पद।

गुरु परम्परा प्रभाव के अनुसार श्री गोदाजी को साक्षात श्री भूदेवी की अवतार मानते हैं। बारह आलवारों ने श्रीमन् नारायण के बारे में चार हज़ार पद्य गाये हैं (दिव्य प्रबंधम)। इन पदों को "द्राविड़ वेदं" बोलते हैं(चारों वेदों का सार)। आलवारों में श्री गोदाजी का एक विशेष स्थान है।

हर एक विषय को पाँच पदों में बाँटकर छः विषयों के बारे में तिरुप्पावै में बताया गया है

(1) पावै व्रत (2) सबको बुलाकर एक साथ भजन करना (3) भगवान् कृष्ण को नींद से जगाना (4) भगवान की प्रशंसा करना (5) उपदेश देना (6) भगवान् के चरणों पर अर्पित करना।

श्री विशिष्टाद्वैत सिद्धान्तम्

विशिष्टास्य –– विशेषणों के साथ – चित, अचित दोनों परमात्मा के विशेषण होते हैं।

अद्वितीयम् –– दो अलग नहीं हैं – एक ही तत्त्व है, (Non dualism)

इसका अर्थ है, कि चित (आत्मा, Chit] Soul), अचित(Matter] Achit) और परमात्मा असल में एक ही तत्त्व होते हैं। इस प्रकृति में तीन तत्त्व होने से भी, चित और अचित परमात्मा का 'शरीर' होते हैं। शुरू में (प्रलय काल) सिर्फ़ परमात्मा (श्रीनारायण) थे –

एकोहवै नारायण आसीत्। ब्रह्म एवेदमग्र आसीत्।

सृष्टि के कारण उन्होंने स्वयं इच्छा से विभिन्न मनुष्य और जन्तुओं की सृष्टि की है। यहाँ 'शरीर' का मतलब प्राकृतिक अंग रक्षक शरीर नहीं है। वह भगवान का नहीं है।

न भूत संघस्स्यानो देहीस्य परमात्मन्।

'शरीर' का मतलब भगवान सब के आधार होते हैं। बिना उनकी इच्छा से कुछ काम नहीं होगा। भगवान आत्माओं की आत्मा होते हैं। इसलिए उनको परमात्मा कहते हैं। दुनिया की सभी चीजें (वस्तुएँ) उनके भाग होते हैं। भगवान और चित–अचित के साथ यह जो 'शरीर–आत्म भाव सम्बन्ध' है, वह हमारे सिद्धान्त का विशेष लक्षण है। इस प्रकार की व्याख्या और किसी सिद्धान्त में नही है।

तिरुप्पावै में विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त

पहले पद में यह बताया गया है कि मार्गशीर्ष महीने ही सबसे अच्छे हैं। भगवान श्रीकृष्ण ने

भगवद् गीता में कहा है, कि वह स्वयं इन महीनों में मार्गाशीर्ष होते हैं।

बृहत्साम तथा साम्नां गायत्री छन्दसामहम्।
मासानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः।।35।।[4]
"नारायणने नमक्के परै तरुवान"

सिर्फ़ नारायण ही हमें पार लगा सकते हैं। 'परै' एक तरह का डोल होता है। लेकिन यहां पर 'परै' का भावार्थ मोक्ष(भगवान का निरंतर और नित्य सेवा करने का मौका)। हमारे सिद्धांत के अनुसार भगवान स्वयं हमारे लिये उपायम्(भ्पजंउ पे मुनंस जव डमंदे) और उपेयम(upeyam, goal, purushartham) होते हैं(We can attain him only through him-)

व्रत के समय में जो नियम पालन करने का है, उनके बारे में दूसरे पद में बताया है। करने का क्रिया – भगवान का प्रशंसा करना, पूजा करना, दान या भिक्षा देना। टालने का क्रिया – किसी का बुराई करना, अपमान करना। तीसरे पद में यह बताया है कि उनके बारे में गाने से या प्रार्थना करने से देश में सुसम्पत्ति रहेगी और किसी की भी बुराई नहीं होगी।

ओंगि उलगलंद उत्तमन पेर्पाडि..... तींगिन्रि
नाडेल्लाम तिन्गल मुम्मारि पेय्दु ओंगु पेरुन्चन्नलूडु

'नींगाद सेलवम' इसका अक्षरशः या बाहरी अर्थ 'असंख्य धन' होता है। लेकिन इसका भावार्थ भगवान की नित्य सेवा करना ही है।

"तूयोमाय वंदु नाम तूमलर तूवित त्तोजुदु वायिनाल पाडि
मनत्तिनाल सिन्दिक्क
पोय पिज़ैयुम पुगुदरुवान निन्न्रनवुम तीयिनिल तूसागुम....."

पाँचवे पद में, शुद्ध मन से, भगवान श्री कृष्ण की पूजा और प्रशंसा करने के फल के बारे में बताया है। तीन तरह की प्रार्थना होते हैं – शारीरिक, मानसिक और वाचिक। उनकी पूजा से मनुष्य ने जो भी पाप किए है, जिसका नतीजा शुरू हुआ है, या भविष्य में होने वाला है, वह सब प्रभावहीन हो जायेगा, जैसे धूल आग में डालने से गायब हो जाती है। यहाँ तीन तरह के पापों के बारे में बताया है –संचित कर्म, आगामी कर्म और प्रारब्ध कर्म।

श्री गोदाजी ने पहले पाँच पदों में पावै व्रत की प्रशंसा की है और महत्त्व बताये हैं। अगले दस पदों में सब साथियों को नींद से जगाकर व्रत में भाग लेने के लिये बुलाती हैं। यहाँ दो तरह के समूह का प्रदर्शन है– एक कैंकर्यनिष्ठ लोग जो भगवान की सेवा करने में अधीरता दिखाते हैं और दूसरा गुणानिष्ठ लोग, जो भगवान के कल्याण गुणों को मन में रख के, भगवान पर पूरा विशवास रख के, ध्यान करने से ही संतुष्ट होते हैं। गुणानिष्ठ लोग भगवान पर पूरा विशवास रखते हैं – इसलिए उनमें अधीरता नहीं है। इस कारण से पद छः से पन्द्रह तक, भावार्थ के अनुसार, यह माना जाता है कि श्री गोदाजी ने इन दस पदों में दस आलवारों को पावै व्रत में भाग लेने के लिये निमंत्रण दिये हैं।

"मामायन माधवन वैकुंदन एन्रेंरू नामं पलपरवि नविन्रेलोरेम्पावाय..... (9)"

नौवां पद भगवान नाम स्मरण करने के महत्त्व को बताता है। नाम संकीर्तन की शक्ति भगवान की शक्ति से भी अधिक है।

"एल्लारुम पोंधारो पोंधार पोंधेण्णिक्कुल वल्लानै कोंरानै... मायनै पाडेलोरेम्पावाय(15)"

इस पद में एक श्रीवैष्णवन की योग्यता के बारे में बताया है। भगवान की पूजा करते समय समूह या धार्मिक सभा में इकट्ठा होना जरूरी है। भगवान के सद्गुण और बहादुरी की प्रशंसा करने से सब लोग आनंद और संतुष्ट हो जाते हैं।

पद सोलह से बीस तक श्री नन्दगोप, श्री यशोदा, श्री बलदेव, श्री नप्पिन्नै और श्रीकृष्ण को जगा कर, उनकी प्रशंसा किये हैं। सोलहवे पद में मन्दिर के सरपरस्त(Gate keeper) को बुलाने के बारे में कहा गया है। हमारे आचार्यों का प्रदर्शन है। उनके बिना हम लोग भगवान के पास नहीं पहुँच सकते हैं। "तूयोमाय" का मतलब भीतरी पवित्रता–च्नतपजल व िउपदक and not of body-

इस पद का भावार्थ है, कि भागवत आराधन (Service to Srivaishnavites) भगवत आराधन से उचित है। उन्नीसवाँ और बीसवाँ पद में नप्पिन्नै का मुख्यत्त्व कहा गया है। यहाँ 'नप्पिन्नै' श्रीनीलादेवी को संकेत करती है। उनका काम, हमें मोक्ष देने के लिए भगवान से सिफ़ारिश करना है। इसे 'पुरुषकारत्वं' कहते हैं (Her role is of recommending authority to Lord.)

इक्कीस से पच्चीस तक श्री कृष्ण की प्रशंसा की है। भगवान को –

'ऊत्रमुडैयाय पेरियाय उलगिनिल थोत्रमाय निंर सुड़रे....'

बोलकर बयान किया है। इसका मतलब यह दुनिया उनके हाथ का खिलौना है और श्री कृष्ण स्वयं ही ब्राह्मण है, जिनका विवरण चारों वेदों में दिया है।

"एंगल मेल नोक्कुदियेल एंगल मेल साबम इजिंदेलोरेम्पावाय (22)"
इस पद का गायन सब रुकावटें दूर करता है। भगवान का दृश्य होने से हमारे कई तरह के पाप हट जायेंगे।

'याम वन्द कारियम आरायंदु अरुलेलोरेम्पावाय (23)'
भगवान की सेवा करना ही फल है। हमें सिर्फ़ दुआ चाहिए – और कुछ उनसे नहीं सीखना है। यह ही पुरुषार्थ (उपेयम) है।

"एन्रेंरुम उन सेवकमे एत्रिप परै कोल्वान इन्नुयाम वन्धोम इरन्गेलोरेम्बावाय (24)"
इस पद में भगवान के कई अवतारों के बारे में बताकर, उनकी प्रशंसा कर के, भगवान की प्रार्थना करते हैं, कि हमेशा उनकी सेवा करने का मौका दिया जायेगा।

"परै तरुदियागिल तिरुत्तक्क सेवकमुम याम्पाडी वरुत्तमुम तीर्न्दु मगिज़नदेलो रेम्पावाय "(25)
भगवान उपायम् (डम्।छै) और उपेयम (ळ८।स्)होकर, हमें मोक्ष देते हैं। यह ही नित्य और निरंतर पूर्ण सुख है।

"कुरै ओंरुमिल्लाद गोविंदा उन्दन्नोडु उरवेल नमक्कु इन्गु ओज़िःकक ओज़ीयाडु अरियाद पिल्लैगलोम अन्बिनाल..... परैयेलो रेम्पावाय(28)
श्री गोविंदजी निर्दोष हैं और इस नाम से उनका सौलभ्य (Easy accessability to every one) का प्रदर्शन होता है। उनके साथ जो शरीरात्मभाव सम्बन्ध है, उसे याद रखने से हमें मोक्ष मिलना ही है।

"इत्रैप परै कोल्वान अन्नु काण गोविंदा एत्रैक्कुम एज्हेज्हेंज्ह पिरविक्कुम उन्दंन्नोडु
उत्रोमेयावोम उनक्के नामात्चेय्वोम मत्रै नम कामंगल मात्रु" (29)
पूरे तिरुप्पावै का सारांश इस वाक्य में ही है। "परै" का असल मतलब कृष्ण को नित्य सेवा करने का मौका ही है। सिर्फ़ इस जन्म में नहीं और भी जो जन्म होगा उनमें भी भगवान की सेवा करते रहेंगे। हमें किसी लाभ की इच्छा नहीं होनी चाहिये।
श्री रामानुजम् ने इसकी व्याख्या की है,

'इतः परम सर्वेषु जन्मसु त्वथ स्वामिका एवं भवामः। तवैव कैम्कर्यम करवामः। अस्माकं विश्यान्थर स्मुहां निवर्त्य
"पट्टबिरान गोदै सोन्न संगत तमिज़ मालै मुप्पदुम तप्पामे इन्गुप्परिसुरैप्पार
ईरिरंदु माल्वरैत्तोल सेंगण तिरुमुगट्टू सेल्वत तिरुमालाल एन्गुम तिरुवरुल पेत्रूइन्बुरुवरेम्पावाय (30)"
इस पद में तिरुप्पावै के तीस पदों को रोज़ गाने से मिलने वाले फलों के बारे में बताया है। सर्वकाल, सर्वदेश, सर्वावस्तै में भगवान की सेवा करने का भाग्य मिलने की प्रार्थना करना हमारा कर्तव्य है। श्रीमन् नारायण का आशीष हमें ज़रूर मिलेगा।

श्रीमत्यै विष्णुचित्तार्य मनोनंदन हेतवे।
नंदनंदन सुन्दर्यै गोदायै नित्य मंगलम्।।
श्री गोदायै चरणं।

इस ग्रन्थ की महत्ता इस बात में भी है, कि ये एक अल्पायु बालिका की रचनाएँ हैं। तमिल साहित्य में यह एक ऐसा अकेला उदाहरण है। 'तिरुपवई' को जन साधारण में रामायण की भाँति अत्यधिक प्रेम भाव और रुचि से सुना जाता है। तमिलनाडु के हर घर में यह ग्रन्थ अत्यन्त लोकप्रिय है। अनेक विद्वानों ने इन दोनों ग्रन्थों का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद किया है। दिसम्बर और जनवरी माह में तमिल, तेलुगु, कन्नड़, हिन्दी, अंग्रेज़ी भाषाओं में, भारत के विभिन्न प्रदेशों में 'तिरुपवई' के प्रवचन चलते रहते हैं। भक्ति–भाव, उस युग के सामाजिक परिवेश के चित्रण और दार्शनिक अनुभूति की दृष्टि से भारतीय महिला सन्तों में, आण्डाल का गौरवमय स्थान है।

संदर्भ सूची

1. Sant Darshan. Vivekanand Institute of Human Excellence, Ramkrishna Math, Hyderabad, e-Book 292v1.0.0, 22 January 2019
2. न्यायमूर्ति शम्भूनाथ श्रीवास्तव – भारतीय संस्कृति के रक्षक सन्त, पावन चिन्ता धारा आश्रम,
3. गाज़ियाबाद, उ.प्र., प्रथम संस्करण, पृष्ठ 26
4. शठकोप 'सहस्र गीति' – गीता प्रेस गोरखपुर, संवत 2070, 3/6/8
5. स्वामी रामसुखदास – भगवद् गीता, गीता प्रेस गोरखपुर, पचानवेवाँ संस्करण, संवत् 2075,
6. अध्याय 10, श्लोक 35, पृष्ठ 731